

Chapter छब्बीस

अद्भुत कृष्ण

इस अध्याय में नन्द महाराज गोपों से कृष्ण के ऐश्वर्य का वर्णन करते हैं जिसे उन्होंने गर्ग मुनि के मुख से सुना था।

भगवान् कृष्ण की शक्ति से अनजान होने के कारण गोपगण उनके विविध असामान्य कार्यों को देखकर चकित रह जाते थे। फलतः लोग नन्द महाराज के पास आते और उनसे कहते कि जिस तरह से उन्होंने सात वर्षीय कृष्ण को पर्वत उठाते तथा इससे पहले पूतना राक्षसी का वध करते देखा है उससे प्रत्येक वृन्दावनवासी के हृदय में उनके प्रति असीम आकर्षण उत्पन्न हो चुका है और उनको सन्देह होता है कि कृष्ण ने ग्वाल समुदाय के इस अनुपयुक्त वातावरण में कैसे जन्म लिया है। नन्द ने उन्हें कृष्ण के विषय में गर्ग मुनि द्वारा कही गई बात बतलाई।

गर्ग मुनि ने बतलाया था कि इससे पूर्व तीन युगों में नन्द का बालक श्वेत, लाल तथा पीत रूपों में प्रकट हो चुका है और अब द्वापर में उसने कृष्ण रूप (गहरा-नीला) धारण किया है। चूँकि वह वासुदेव के पुत्र के रूप में अवतरित हुआ है अतएव उसका एक नाम वासुदेव है और उसके नाना गुणों तथा कार्यों को बतलाने वाले उसके अन्य अनेक नाम हैं।

गर्ग मुनि ने भविष्यवाणी की थी कि कृष्ण गोकुल पर आने वाले सारे संकटों को रोकेंगे, असीम मंगल का प्रसार करेंगे और गोपों तथा गोपिकाओं के आनन्द को वर्धित करेंगे। विगत युग में उन्होंने निम्नजाति के डाकुओं द्वारा सताये गये सन्त ब्राह्मणों की रक्षा की थी। चूँकि जिस तरह उच्च लोकों के असुरगण उन देवताओं को कभी नहीं हरा सकते जिनकी ओर भगवान् विष्णु हों उसी तरह जो लोग

कृष्ण से प्रेम करते हैं उन्हें कोई भी शत्रु पराजित नहीं कर सकता। अपने भक्तों के प्रति अपने अनुराग तथा अपने ऐश्वर्य एवं शक्ति में कृष्ण साक्षात् नारायण के समान हैं।

गर्ग मुनि के कथन से अतीव हर्षित तथा आश्चर्य से स्तम्भित हुए ग्वालों ने यह निष्कर्ष निकाला कि हो न हो कृष्ण भगवान् नारायण के शक्त्वाष्टि प्रतिनिधि हैं। अतः उन्होंने कृष्ण तथा नन्द महाराज की पूजा की।

श्रीशुक उवाच

एवंविधानि कर्माणि गोपाः कृष्णस्य वीक्ष्य ते ।

अतद्वीर्यविदः प्रोचुः समभ्येत्य सुविस्मिताः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; एवम्-विधानि—इस तरह के; कर्माणि—कार्यों को; गोपाः—ग्वाले; कृष्णस्य—कृष्ण के; वीक्ष्य—देखकर; ते—वे; अतत्-वीर्य-विदः—उनकी शक्ति को समझने में असमर्थ; प्रोचुः—बोले; समभ्येत्य—(नन्द महाराज के) पास जाकर; सु-विस्मिताः—अत्यन्त विस्मित होकर।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : जब गोपों ने गोवर्धन पर्वत उठाने जैसे कृष्ण के कार्यों को देखा तो वे विस्मित हो गये। उनकी दिव्य शक्ति को न समझ पाने के कारण वे नन्द महाराज के पास गये और इस प्रकार बोले।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने इस श्लोक की व्याख्या इस प्रकार की है श्रीगोवर्धन पर्वत उठाने की लीला के समय ग्वालों ने भगवान् के कार्य की छानबीन किये बिना केवल आध्यात्मिक आनन्द लूटा। किन्तु बाद में जब वे अपने घर लौट आये तो उनके मन में चिन्ता उठने लगी। उन्होंने सोचा “अब तो हमने बालक कृष्ण को गोवर्धन पर्वत उठाते अपनी आँखों से देख लिया और हमें यह स्मरण है ही कि उसने किस तरह पूतना तथा अन्य असुरों को मारा, जंगल की आग बुझाई इत्यादि-इत्यादि। उस समय हमने सोचा था कि ये अद्वितीय कार्य ब्राह्मणों के आशीर्वाद या नन्द महाराज के सौभाग्य या शायद इस बालक पर नारायण की कृपा से उसे मिली शक्ति से सम्पन्न हुए होंगे।

किन्तु हमारी ये सारी कल्पनाएँ झूठी हैं क्योंकि एक सात साल का सामान्य बालक इस तरह पूरे सात दिनों तक पर्वतराज को उठाये नहीं रह सकता था। कृष्ण मानव नहीं है। वह अवश्य ही स्वयं भगवान् होगा।”

किन्तु दूसरी ओर जब हम कृष्ण को दुलारते हैं, तो उसे अच्छा लगता है और जब हम उसके

चाचा तथा शुभचिन्तक भोलेभाले ग्वाले उसकी ओर ध्यान नहीं देते तो वह खिन्न हो जाता है। वह भूखा-प्यासा होने लगता है, दूध तथा दही चुराता है, कभी शैतानी करता है, झूठ बोलता है, बालकों जैसी बातें करता है और बछड़े चराता है। यदि वह सचमुच भगवान् है, तो फिर ऐसी बातें क्यों करता है? तो क्या इससे यह सूचित नहीं होता कि वह एक सामान्य बालक है?”

“हम उसकी पहचान के बारे में सच्चाई जान पाने में असमर्थ हैं। अतः चलो, चलकर परम चतुर ब्रजराज नन्द महाराज से पूछा जाय। वे ही हमारे संशयों को दूर करेंगे।”

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर के अनुसार ग्वालों ने संकल्प किया और वे नन्द महाराज के विशाल सभासदन में गये और उनसे अगले श्लोक में वर्णित प्रश्न किए।

बालकस्य यदेतानि कर्माण्यत्यद्भुतानि वै ।
कथमर्हत्यसौ जन्म ग्राम्येष्वात्मजुगुप्सितम् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

बालकस्य—बालक के; यत्—क्योंकि; एतानि—इन; कर्माणि—कर्मों को; अति-अद्भुतानि—अत्यन्त अद्भुत; वै—निश्चय ही; कथम्—कैसे; अर्हति—चाहिए; असौ—वह; जन्म—जन्म; ग्राम्येषु—संसारी लोगों के बीच; आत्म—अपने लिए; जुगुप्सितम्—घृणित।

[ग्वालों ने कहा]: जब यह बालक ऐसे अद्भुत कार्य करता है, तो फिर किस तरह हम जैसे संसारी व्यक्तियों के बीच उसने जन्म लिया? ऐसा जन्म तो उसके लिए घृणित लगेगा।

तात्पर्य : सामान्य जीव अप्रिय परिस्थितियों से अपने को नहीं बचा सकता किन्तु परम नियन्ता हमेशा अपनी इच्छा के अनुसार पूर्ण व्यवस्था कर सकता है।

यः सप्तहायनो बालः करेणैकेन लीलया ।
कथं बिभ्रद्गिरिवरं पुष्करं गजराडिव ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

यः—जो; सप्त-हायनः—सात वर्ष की आयु का; बालः—बालक; करेण—हाथ से; एकेन—एक; लीलया—खेल खेल में; कथम्—कैसे; बिभ्रत्—उठाये रहा; गिरि-वरम्—पर्वतों में श्रेष्ठ, गोवर्धन को; पुष्करम्—कमल के फूल को; गज-राट्—बलशाली हाथी; इव—सदृश।

यह सात वर्ष का बालक किस तरह विशाल गोवर्धन पर्वत को खेल खेल में एक हाथ से उसी तरह उठाये रह सकता है, जिस तरह बलशाली हाथी कमल के फूल को उठा लेता है?

तोकेनामीलिताक्षेण पूतनाया महौजसः ।

पीतः स्तनः सह प्राणैः कालेनेव वयस्तनोः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

तोकेन—नहें बालक द्वारा; आ-मीलित—प्रायः बन्द; अक्षेण—आँखों से; पूतनायाः—पूतना डाइन का; महा-ओजसः—महान् पराक्रम वाली; पीतः—पिया हुआ; स्तनः—स्तन; सह—साथ; प्राणैः—प्राण वायु के; कालेन—काल की शक्ति से; इव—सदृश; वयः—आयु; तनोः—भौतिक शरीर का।

अभी इसने अपनी आँखें भी नहीं खोली थीं और निरा बच्चा ही था कि इसने बलशाली राक्षसी पूतना के स्तन का दूध पिया और उसी के साथ उसके प्राण चूस लिये जिस तरह काल की शक्ति मनुष्य के शरीर से यौवन को चूस लेती है।

तात्पर्य : इस श्लोक में वयः शब्द यौवन या सामान्यतः आयु का सूचक है। काल अपनी अप्रतिहत शक्ति से हमारे प्राण को चूस लेता है और वह काल वास्तव में स्वयं भगवान् कृष्ण हैं। बलशाली राक्षसी पूतना के मामले में भगवान् कृष्ण ने काल विधि को तेज कर दिया और क्षण भर में उसकी आयु सोख ली। यहाँ पर ग्वालों के कहने का अर्थ है, कि “ऐसा बालक जिसने अभी आँखें भी नहीं खोली थीं वह किस तरह इतनी शक्तिशालिनी राक्षसी को मार सका।”

हिन्वतोऽधः शयानस्य मास्यस्य चरणावुदक् ।

अनोऽपतद्विपर्यस्तं रुदतः प्रपदाहतम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

हिन्वतः—हिलाते हुए; अधः—नीचे; शयानस्य—लेटे हुए; मास्यस्य—कुछ मास वाले बालक को; चरणौ—दो पाँव; उदक्—ऊपर की ओर; अनः—छकड़ा; अपतत्—गिर पड़ा; विपर्यस्तम्—उलटा हुआ; रुदतः—रोते हुए; प्रपद—अपने पाँव के अग्रभाग से; आहतम्—प्रताड़ित।

एक बार जब कृष्ण तीन मास के छोटे शिशु थे, तो रो रहे थे और एक बड़े से छकड़े के नीचे लेटे हुए अपने पाँवों को ऊपर चला रहे थे। तभी यह छकड़ा गिरा और उलट गया क्योंकि उन्होंने अपने पाँव के अँगूठे से उस पर प्रहार किया था।

एकहायन आसीनो ह्यिमाणो विहायसा ।

दैत्येन यस्तृणावर्तमहन्कण्ठग्रहातुरम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

एक-हायनः—एकवर्षीय; आसीनः—बैठा हुआ; ह्यिमाणः—हरण किया गया; विहायसा—आकाश में; दैत्येन—असुर द्वारा; यः—जिसने; तृणावर्तम्—तृणावर्त को; अहन्—मारा; कण्ठ—गला; ग्रह—पकड़ा जाकर; आतुरम्—सताया गया।

एक वर्ष की आयु में, जब वे शान्तिपूर्वक बैठे थे तो तृणावर्त नामक असुर उन्हें आकाश में

उड़ा ले गया। किन्तु बालक कृष्ण ने उस असुर की गर्दन दबोच ली जिससे उसे महान् पीड़ा हुई और इस तरह उसे मार डाला।

तात्पर्य : कृष्ण को सामान्य बालक के रूप में स्नेह करने वाले ग्वाले ये सारे कार्य देखकर चकित थे। एक नवजात शिशु कहीं शक्तिशाली डाइन को मार सकता है? और यह किसी को विश्वास नहीं होगा कि एक वर्ष का बालक उस असुर को मार सकता है, जो उसका अपहरण करके आकाश में ले गया हो। किन्तु कृष्ण ने ये सारे अद्भुत कार्य किये। ये गोपगण कृष्ण के कार्यकलापों का स्मरण करके तथा उनकी चर्चा चलाकर उनके प्रति अपने प्रेम को वर्धित कर रहे थे।

क्वचिद्धैयङ्गवस्तैन्ये मात्रा बद्ध उदूखले ।

गच्छन्नर्जुनयोर्मध्ये बाहुभ्यां तावपातयत् ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

क्वचित्—एक बार; हैयङ्गव—मक्खन; स्तैन्ये—चुराते हुए; मात्रा—अपनी माता द्वारा; बद्धः—बाँधे गये; उदूखले—ऊखल में; गच्छन्—जाते हुए; अर्जुनयोः—दो अर्जुन वृक्षों के; मध्ये—बीच में; बाहुभ्याम्—अपने हाथों से; तौ अपातयत्—दोनों को गिरा दिया, उखाड़ डाला।

एक बार उनकी माता ने उन्हें रस्सियों से एक ऊखल से बाँध दिया क्योंकि माता ने उन्हें मक्खन चुराते पकड़ लिया था। तब वे अपने हाथों के बल रेंगते हुए उस ऊखल को दो अर्जुन वृक्षों के बीच खींच ले गये और उन वृक्षों को उखाड़ डाला।

तात्पर्य : ये दोनों अर्जुन वृक्ष पुराने तथा मोटे थे और कृष्ण के आँगन के ऊपर उठे हुए थे। फिर भी इस नटखट बालक ने उन्हें आसानी से धराशायी कर दिया।

वने सञ्चारयन्वत्सान्सरामो बालकैर्वृतः ।

हन्तुकामं बकं दोर्भ्यां मुखतोऽरिमपाटयत् ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

वने—जंगल में; सञ्चारयन्—चराते हुए; वत्सान्—बछड़ों को; सरामः—बलदेव के साथ; बालकैः—ग्वालबालों के द्वारा; वृतः—घिरा हुआ; हन्तु-कामम्—मार डालने की इच्छा से; बकम्—बकासुर; दोर्भ्याम्—अपनी बाँहों से; मुखतः—मुख से; अरिम्—शत्रु को; अपाटयत्—चीर डाला।

अन्य समय जब वे बलराम तथा ग्वालबालों के साथ वन में गौवें चरा रहे थे तो राक्षस बकासुर उनको मार डालने की मंशा से वहाँ आया। किन्तु कृष्ण ने इस शत्रु राक्षस का मुँह (चोंच) पकड़ लिया और उसको चीर डाला।

वत्सेषु वत्सरूपेण प्रविशन्तं जिघांसया ।
हत्वा न्यपातयत्तेन कपित्थानि च लीलया ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

वत्सेषु—बछड़ों के बीच; वत्स-रूपेण—अन्य बछड़े के रूप में प्रकट होकर; प्रविशन्तम्—घुसकर; जिघांसया—मार डालने की इच्छा से; हत्वा—मारकर; न्यपातयत्—गिरा दिया; तेन—उससे; कपित्थानि—कैथे के फल; च—तथा; लीलया—खेल खेल में।

कृष्ण को मार डालने की इच्छा से राक्षस वत्सासुर बछड़े का वेश बनाकर उनके बछड़ों के बीच घुस गया। किन्तु कृष्ण ने इस असुर को मार डाला और इसके शरीर से कैथे के वृक्षों से फल नीचे गिराने का खिलवाड़ किया।

हत्वा रासभदैतेयं तद्धन्धुंश्च बलान्वितः ।
चक्रे तालवनं क्षेमं परिपक्वफलान्वितम् ॥ १० ॥

शब्दार्थ

हत्वा—मारकर; रासभ—गधा के रूप में प्रकट हुए; दैतेयम्—दिति के वंशज को; तत्-बन्धुन्—उस असुर के संगियों को; च—भी; बल-अन्वितः—बलराम के साथ; चक्रे—बनाया; ताल-वनम्—तालवन को; क्षेमम्—कल्याणप्रद, मंगलमय; परिपक्व—पके; फल—फलों से; अन्वितम्—पूर्ण।

भगवान् बलराम समेत कृष्ण ने राक्षस धेनुकासुर तथा उसके सभी साथियों का वध किया और इस तरह तालवन जंगल को, जो पके हुए ताड़ फलों से भरापुरा था, सुरक्षित बनाया।

तात्पर्य : बहुत समय पूर्व देवी दिति के गर्भ से हिरण्यकशिपु तथा हिरण्याक्ष नामक शक्तिशाली असुर उत्पन्न हुए थे। इसीलिए असुरों को दैतेय या दैत्य कहा जाता है, जिसका अर्थ है दिति की संतानें। धेनुकासुर अर्थात् गर्दभासुर ने अपने मित्रों के साथ उसने तालवन में आतंक मचा रखा था किन्तु कृष्ण तथा बलराम ने उन सबों को मार डाला जिस तरह कि आधुनिक सरकारें निर्दोष जनता को तंग करने वाले आतंकवादियों का वध कर देती हैं।

प्रलम्बं घातयित्त्वोग्रं बलेन बलशालिना ।
अमोचयद्ब्रजपशून्गोपांश्चारण्यवह्नितः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

प्रलम्बम्—प्रलम्बासुर को; घातयित्वा—मरवा डालने की व्यवस्था करके; उग्रम्—भीषण; बलेन—बलराम द्वारा; बल-शालिना—बलशाली; अमोचयत्—उबारा; ब्रज-पशून्—ब्रज के पशुओं को; गोपान्—ग्वालबालों को; च—तथा; आरण्य—जंगल की; वह्नितः—अग्नि से।

भीषण दैत्य प्रलम्बासुर को बलशाली भगवान् बलराम द्वारा मरवाकर कृष्ण ने ब्रज के

ग्वालबालों तथा उनके पशुओं को दावानल (जंगल की आग) से बचाया ।

आशीविषतमाहीन्द्रं दमित्वा विमदं हृदात् ।

प्रसह्योद्वास्य यमुनां चक्रेऽसौ निर्विषोदकाम् ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

आशी—उसके विषदन्तों का; विष-तम—सबसे शक्तिशाली विषैला; अहि—साँप के; इन्द्रम्—प्रधान को; दमित्वा—दमन करके; विमदम्—मद को चूर करके; हृदात्—सरोवर से; प्रसह्य—बलपूर्वक; उद्वास्य—भगाकर; यमुनाम्—यमुना नदी को; चक्रे—बनाया; असौ—इसी ने; निर्विष—विषरहित; उदकाम्—जल को ।

कृष्ण ने अति विषैले नाग कालिय को दण्ड दिया और उसे विनीत बनाकर यमुना के सरोवर से बलपूर्वक निकाल बाहर किया। इस तरह भगवान् ने उस नदी के जल को साँप के प्रचण्ड विष से मुक्त बनाया ।

दुस्त्यजश्चानुरागोऽस्मिन्सर्वेषां नो ब्रजौकसाम् ।

नन्द ते तनयेऽस्मासु तस्याप्यौत्पत्तिकः कथम् ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

दुस्त्यजः—त्याग पाना असम्भव; च—तथा; अनुरागः—प्रेम; अस्मिन्—उनके लिए; सर्वेषाम्—सब; नः—हम; ब्रज-ओकसाम्—ब्रजवासियों का; नन्द—प्रिय नन्द महाराज; ते—तुम्हारे; तनये—पुत्र के लिए; अस्मासु—हम सबों के प्रति; तस्य—उसका; अपि—भी; औत्पत्तिकः—स्वाभाविक; कथम्—किस तरह से ।

हे नन्द महाराज, हम तथा ब्रज के सारे वासी क्योंकर आपके पुत्र के प्रति अपना निरन्तर स्नेह त्याग नहीं पा रहे हैं? और वे हम लोगों के प्रति स्वतः इतना आकृष्ट क्योंकर हैं?

तात्पर्य : कृष्ण शब्द का अर्थ है “सर्वाकर्षक”। वृन्दावनवासी भगवान् कृष्ण के प्रति अपना अनुराग छोड़ नहीं पाये। उनके प्रति निवासियों की प्रवृत्ति विशेष रूप से आस्तिक न थी क्योंकि उन्हें विश्वास न था कि वे ईश्वर हैं अथवा नहीं। किन्तु वे उन सबों के प्रेम को आकृष्ट करते रहे क्योंकि ईश्वर होने के नाते वे सर्व सर्वाकर्षक हैं—हमारे प्रेम के परम केन्द्र ।

ग्वालों ने यह भी पूछा, “बालक कृष्ण क्योंकर हम सबों से अनुराग रखता है?” वस्तुतः भगवान् सारे जीवों से प्रेम करते हैं क्योंकि वे उनकी नित्य सन्तानें हैं। *भगवद्गीता* के अन्त में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन के प्रति अपने स्नेह की घोषणा नाटकीय ढंग से करते हुए अर्जुन से आग्रह किया कि वह भी उनकी शरण में आकर प्रेम का प्रतिदान करे। श्री चैतन्य महाप्रभु कृष्ण की स्तुति करते हुए कहते हैं, “हे प्रभु! आप मुझपर इतने दयालु हैं किन्तु मैं इतना अभागा हूँ कि मेरे अन्तर में आपके प्रति प्रेम जगा

ही नहीं।” (शिक्षाष्टक २) इसी स्तुति में चैतन्य महाप्रभु *अनुराग* शब्द का प्रयोग करते हैं। हमारा दुर्भाग्य यह है कि भगवान् हमारे लिए जैसे अनुराग का अनुभव करते हैं उसका हम प्रतिदान नहीं कर पाते। यद्यपि हम सूक्ष्म तथा नगण्य हैं और भगवान् अनन्त आकर्षक हैं किन्तु किन्हीं कारणों से हम उन्हें अपना प्रेम नहीं दे पाते। हमें इस मूर्खता का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना चाहिए क्योंकि ईश्वर की शरण में जाना या न जाना हमारी स्वच्छन्दता की अनिवार्य अभिव्यक्ति है।

कृष्णभावनामृत आन्दोलन बद्धजीवों को अपनी मूल आनन्दमय चेतना को, जो कि भगवत्प्रेम या कृष्णभावनामृत है, जाग्रत करने का सक्षम, क्रमबद्ध कार्यक्रम प्रस्तुत करता है। कृष्णभावनामृत की जटिलताएँ इतनी अद्भुत हैं कि कृष्ण के नित्यसंगी वृन्दावनवासी तक उनसे चकित हो जाते हैं जैसाकि इन श्लोकों में दर्शाया गया है।

क्व सप्तहायनो बालः क्व महद्रिविधारणम् ।
ततो नो जायते शङ्का व्रजनाथ तवात्मजे ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

क्व—कहाँ तो; सप्त-हायनः—सप्तवर्षीय; बालः—यह बालक; क्व—कहाँ; महा-अद्रि—विशाल पर्वत का; विधारणम्—उठाया जाना; ततः—इस प्रकार; नः—हमारे लिए; जायते—उत्पन्न करता है; शङ्का—सन्देह; व्रज-नाथ—हे व्रज के स्वामी; तव—तुम्हारे; आत्मजे—पुत्र के विषय में।

कहाँ तो यह सात वर्ष का बालक और कहाँ उसके द्वारा विशाल गोवर्धन पर्वत का उठाया जाना, अतएव, हे व्रजराज, हमारे मन में आपके पुत्र के विषय में शंका उत्पन्न हो रही है।

श्रीनन्द उवाच

श्रूयतां मे वचो गोपा व्येतु शङ्का च वोऽर्भके ।
एनम्कुमारमुद्दिश्य गर्गो मे यदुवाच ह ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

श्री-नन्दः उवाच—श्रीनन्द महाराज ने कहा; श्रूयताम्—सुनो; मे—मेरे; वचः—शब्द; गोपाः—हे ग्वालो; व्येतु—दूर करो; शङ्का—सन्देह; च—तथा; वः—अपनी; अर्भके—बालक के विषय में; एनम्—इस; कुमारम्—बालक को; उद्दिश्य—दिखलाते हुए; गर्गः—गर्ग मुनि ने; मे—मुझसे; यत्—जो; उवाच—कहा; ह—था।

नन्द महाराज ने उत्तर दिया: हे ग्वालो, जरा मेरी बातें सुनो और मेरे पुत्र के विषय में जो अपनी शंकाएँ हों उन्हें दूर कर दो। कुछ समय पहले गर्ग मुनि ने इस बालक के विषय में मुझसे इस प्रकार कहा था।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी की टीका है गर्गाचार्य से पूर्वकाल में सुने गये शब्दों से नन्द महाराज

में कृष्ण के विषय में सचाई का उदय हुआ और कृष्ण के सारे कार्यकलापों का निरन्तर स्मरण करने से नन्द के वे सारे विचार छूमन्तर हो गये कि ऐसे कार्य असम्भव हैं। अब वे ग्वालों को उन्हीं शब्दों से शिक्षा दे रहे हैं।

वर्णास्त्रयः किलास्यासन्गृह्यतोऽनुयुगं तनूः ।

शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णातां गतः ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

वर्णाः त्रयः—तीन रंग; किल—निस्सन्देह; अस्य—तुम्हारे पुत्र कृष्ण के; आसन्—थे; गृह्यतः—ग्रहण किये गये; अनु-युगम् तनूः—विभिन्न युगों के अनुसार दिव्य शरीर; शुक्लः—कभी श्वेत; रक्तः—कभी लाल; तथा—और; पीतः—कभी पीला; इदानीम् कृष्णाताम् गतः—सम्प्रति उसने श्याम वर्ण धारण किया है।

[गर्ग मुनि ने कहा था] : आपका पुत्र कृष्ण हर युग में अवतार के रूप में प्रकट होता है।

भूतकाल में उसने तीन रंग—श्वेत, लाल तथा पीला धारण किये थे और अब वह श्यामवर्ण में प्रकट हुआ है।

तात्पर्य : यह तथा इसके आगे के छः श्लोक (१७ से २२ तक) इसी स्कन्ध के आठवें अध्याय से लिये गये हैं जिनमें गर्ग मुनि नन्द महाराज को नन्द-पुत्र कृष्ण के विषय में समझाते हैं। जो अनुवाद यहाँ पर दिये गये हैं, वे श्रील ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद द्वारा दिये गये अर्थ पर आधारित हैं। अध्याय आठ में जहाँ ये श्लोक मूल रूप में दिए गए हैं श्रील प्रभुपाद द्वारा लिखित विस्तृत तात्पर्य मिलेंगे।

प्रागयं वसुदेवस्य क्वचिज्जातस्तवात्मजः ।

वासुदेव इति श्रीमानभिज्ञाः सम्प्रचक्षते ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

प्राक्—पहले; अयम्—यह बालक; वसुदेवस्य—वसुदेव का; क्वचित्—कभी; जातः—उत्पन्न हुआ था; तव—तुम्हारा; आत्मजः—बालक के रूप में जन्मा कृष्ण; वासुदेवः—अतः उसका नाम वासुदेव रखा जा सकता है; इति—इस प्रकार; श्रीमान्—अत्यन्त सुन्दर; अभिज्ञाः—विद्वज्जन; सम्प्रचक्षते—यह कहते हैं कृष्ण ही वासुदेव हैं।

अनेक कारणों से आपका यह सुन्दर पुत्र कभी वसुदेव के पुत्र रूप में प्रकट हो चुका है।

अतएव विद्वज्जन कभी कभी इस बालक को वासुदेव कहते हैं।

बहूनि सन्ति नामानि रूपाणि च सुतस्य ते ।

गुण कर्मानुरूपाणि तान्यहं वेद नो जनाः ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

बहूनि—विविध; सन्ति—हैं; नामानि—नाम; रूपाणि—स्वरूप; च—कभी; सुतस्य—पुत्र के; ते—तुम्हारे; गुण-कर्म-
अनुरूपाणि—अपने गुणों तथा कर्मों के अनुसार; तानि—उन्हें; अहम्—मैं; वेद—जानता हूँ; न उ जनाः—सामान्य पुरुष नहीं।
तुम्हारे इस पुत्र के अपने दिव्य गुणों तथा कर्मों के अनुसार अनेक रूप तथा नाम हैं। मैं उन्हें
जानता हूँ किन्तु सामान्य जन उन्हें नहीं समझते।

एष वः श्रेय आधास्यद्गोपगोकुलनन्दनः ।
अनेन सर्वदुर्गाणि यूयमञ्जस्तरिष्यथ ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

एषः—यह बालक; वः—तुम सबों के लिए; श्रेयः आधास्यत्—कल्याण करने वाला होगा; गोप-गोकुल-नन्दनः—मानों
गोकुल के पुत्र के रूप में ग्वालों के परिवार में उत्पन्न ग्वालबाल हो; अनेन—इसके द्वारा; सर्व-दुर्गाणि—सभी प्रकार के कष्टों
को; यूयम्—तुम सभी; अञ्जः—सरलता से; तरिष्यथ—तर सकोगे।
गोकुल के ग्वालों के दिव्य आनन्द में वृद्धि करने के लिए यह बालक सदैव तुम सबका
कल्याण करेगा। और उसकी कृपा से ही तुम लोग सारे कष्टों को पार कर सकोगे।

पुरानेन ब्रजपते साधवो दस्युपीडिताः ।
अराजके रक्ष्यमाणा जिग्युर्दस्यून्समेधिताः ॥ २० ॥

शब्दार्थ

पुरा—प्राचीन काल में; अनेन—कृष्ण द्वारा; ब्रज-पते—हे ब्रजराज; साधवः—ईमानदार लोग; दस्यु-पीडिताः—चोर-उचक्यों
द्वारा पीड़ित किये जाकर; अराजके—अनियमित सरकार के होते हुए; रक्ष्यमाणाः—रक्षा किये जाते थे; जिग्युः—जीत लिया;
दस्यून्—चोर-उचक्यों को; समेधिताः—फलते-फूलते।
हे नन्द महाराज, इतिहास में यह अंकित है कि जब अनियमित तथा अक्षम सरकार थी, जब
इन्द्र को सिंहासन से उतार दिया गया था और जब ईमानदार लोग चोरों द्वारा सताये जा रहे थे तो
यह बालक उचक्यों का दमन करने तथा लोगों की रक्षा करने और उन्हें फलने-फूलने योग्य
बनाने के लिए प्रकट हुआ था।

य एतस्मिन्महाभागे प्रीतिं कुर्वन्ति मानवाः ।
नारयोऽभिभवन्त्येतान्विष्णुपक्षानिवासुराः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

ये—जो व्यक्ति; एतस्मिन्—इस बालक को; महा-भागे—परम भाग्यशाली; प्रीतिम्—स्नेह; कुर्वन्ति—करते हैं; मानवाः—ऐसे
मनुष्य; न—नहीं; अरयः—शत्रुगण; अभिभवन्ति—पराजित करते हैं; एतान्—कृष्ण से अनुराग करने वाले; विष्णु-पक्षान्—
जिनके पक्ष में सदैव विष्णु रहते हैं उन देवताओं को; इव—सदृश; असुराः—असुरगण।
असुरगण देवताओं को हानि नहीं पहुँचा सकते क्योंकि भगवान् विष्णु सदैव उनके पक्ष में

रहते हैं। इसी प्रकार सर्वमंगलमय कृष्ण से अनुरक्त कोई भी व्यक्ति या समूह शत्रुओं द्वारा पराजित नहीं किया जा सकता।

तात्पर्य : इस सम्बन्ध में श्रील प्रभुपाद ने विशेष रूप से संकेत किया है कि जिस प्रकार भगवान् कृष्ण के संगी कंस द्वारा पराजित नहीं किये जा सके उसी तरह उनके आज के भक्तगण अपने आसुरी प्रतिद्वन्द्वियों द्वारा पराजित नहीं किये जा सकेंगे। न ही भगवान् के भक्तगण आन्तरिक शत्रुओं से यथा वासनामय भौतिकतावादी इन्द्रियों द्वारा पराजित हो सकेंगे।

तस्मान्नन्द कुमारोऽयं नारायणसमो गुणैः ।

श्रिया कीर्त्यानुभावेन तत्कर्मसु न विस्मयः ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

तस्मात्—इसलिए; नन्द—हे नन्द महाराज; कुमारः—बालक; अयम्—यह; नारायण-समः—नारायण के समान; गुणैः—अपने गुणों से; श्रिया—अपने ऐश्वर्य से; कीर्त्या—विशेषतया अपने नाम तथा यश से; अनुभावेन—तथा अपने प्रभाव से; तत्—उसके; कर्मसु—कर्मों के सम्बन्ध में; न—नहीं है; विस्मयः—आश्चर्य।

अतएव हे नन्द महाराज, आपका यह बालक नारायण सरीखा है। यह अपने दिव्य गुण, ऐश्वर्य, नाम, यश तथा प्रभाव में बिल्कुल नारायण जैसा ही है। अतः इसके कार्यों से आपको चकित नहीं होना चाहिए।

तात्पर्य : यहाँ पर नन्द ग्वालों से गर्ग मुनि द्वारा बताई गई अन्तिम बातें सूचित कर रहे हैं, जो कृष्ण के गुप्त जन्मोत्सव के समय उन्होंने कही थीं।

इत्यब्दा मां समादिश्य गर्गे च स्वगृहं गते ।

मन्ये नारायणस्यांशं कृष्णमक्लिष्टकारिणम् ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार कह कर; अब्दा—प्रत्यक्ष; माम्—मुझको; समादिश्य—आदेश देकर; गर्गे—गर्गाचार्य; च—तथा; स्व-गृहम्—अपने घर; गते—चले गये; मन्ये—मैं विचार करता हूँ; नारायणस्य—भगवान् नारायण का; अंशम्—शक्त्याविष्ट अंश; कृष्णम्—कृष्ण को; अक्लिष्ट-कारिणम्—हमें क्लेश से मुक्त रखने वाले।

[नन्द महाराज ने कहा] : जब गर्ग ऋषि ये शब्द कहकर अपने घर चले गये तो मैं विचार करने लगा कि जो कृष्ण हमें क्लेश से दूर रखता है, वह वास्तव में भगवान् नारायण का अंश है।

इति नन्दवचः श्रुत्वा गर्गगीतं तं ब्रजौकसः ।
मुदिता नन्दमानर्चुः कृष्णां च गतविस्मयाः ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; नन्द-वचः—नन्द महाराज के शब्द को; श्रुत्वा—सुनकर; गर्ग-गीतम्—गर्गऋषि के कथन को; ब्रज-ओकसः—ब्रजवासी; मुदिताः—प्रसन्न; नन्दम्—नन्द महाराज को; आनर्चुः—सम्मानित किया; कृष्णम्—कृष्ण को; च—तथा; गत—दूर हो गया; विस्मयाः—उनका विस्मय ।

[शुकदेव गोस्वामी ने कहा] : नन्द महाराज द्वारा कहे गए गर्ग मुनि के कथन को सुनकर वृन्दावन के वासी परम प्रमुदित हुए। उनका विस्मय जाता रहा और उन्होंने आदरपूर्वक नन्द तथा भगवान् कृष्ण की पूजा की।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी बतलाते हैं कि इस श्लोक का आनर्चुः शब्द सूचित करता है कि वृन्दावनवासियों ने अपने घर से लाई हुई सुगन्धि, मालाएँ तथा वस्त्रों की भेंटों से नन्द तथा कृष्ण को सम्मानित किया। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर कहते हैं कि वृन्दावनवासियों ने नन्द तथा कृष्ण को रत्नों तथा स्वर्णमुद्राओं की प्रेम-भेंट देकर सम्मानित किया। स्पष्ट है कि जब यह वार्ता हो रही थी तो कृष्ण जंगल में क्रीड़ा कर रहे थे अतएव जब वे घर लौटे तो वृन्दावनवासियों ने उन्हें सुन्दर पीत वस्त्रों, गले की मालालों, बाजूबंदों, कुण्डलों तथा मुकुटों से अलंकृत किया और “वृन्दावनरत्न की जय हो” के नारे लगाकर उन्हें प्रोत्साहित किया।

देवे वर्षति यज्ञविप्लवरुषा वज्रास्मवर्षानिलैः

सीदत्पालपशुस्त्रियात्मशरणं दृष्ट्वानुकम्प्युत्समयन् ।

उत्पाट्यैककरेण शैलमबलो लीलोच्छिलीन्ध्रं यथा

बिभ्रद्गोष्ठमपान्महेन्द्रमदभित्प्रीयान्न इन्द्रो गवाम् ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

देवे—जब इन्द्रदेव ने; वर्षति—वर्षा कराई; यज्ञ—अपने यज्ञ के; विप्लव—उत्पात के कारण; रुषा—क्रोधवश; वज्र—वज्र से; अश्रम-वर्ष—उपल; अनिलैः—तथा वायु से; सीदत्—कष्ट उठाते हुए; पाल—गवाले; पशु—पशु; स्त्रि—तथा स्त्रियाँ; आत्म—स्वयं; शरणम्—एकमात्र आश्रय; दृष्ट्वा—देखकर; अनुकम्पी—अत्यन्त दयालु; उत्समयन्—हँसते हुए; उत्पाट्य—उखाड़ कर; एक-करेण—एक हाथ से; शैलम्—पर्वत, गोवर्धन को; अबलः—छोटा बालक; लीला—खेल में; उच्छिलीन्ध्रम्—कुकुरमुत्ता को; यथा—जिस प्रकार; बिभ्रत्—पकड़ लिया; गोष्ठम्—गोपजाति को; अपात्—बचाया; महा-इन्द्र—इन्द्र का; मद—गर्व को; भित्—नाश करने वाला; प्रीयात्—प्रसन्न हो जाय; नः—हमपर; इन्द्रः—स्वामी; गवाम्—गौवों का ।

अपना यज्ञ भंग किये जाने पर इन्द्र क्रोधित हुआ और उसने गोकुल पर वर्षा की तथा वज्रपात और तेज हवा के साथ साथ ओले गिराये जिनसे गौवों, पशुओं तथा स्त्रियों को अतीव कष्ट हुआ। जब दयालु प्रकृति वाले भगवान् कृष्ण ने उन सबों की यह दशा देखी जिनके उन्हें

छोड़कर कोई दूसरी शरण नहीं थी तो वे मन्द-मन्द हँसने लगे और एक हाथ से उन्होंने गोवर्धन पर्वत को उठा लिया जिस तरह कोई छोटा सा बालक खेलने के लिए कुकुरमुत्ते को उखाड़ लेता है। इस तरह से उन्होंने ग्वाल-समुदाय की रक्षा की। गौवों के स्वामी तथा इन्द्र के मिथ्या गर्व को खंडित करने वाले वे ही गोविन्द हम सबों पर प्रसन्न हों।

तात्पर्य : इन्द्र शब्द का अर्थ “स्वामी” या “राजा” है। इस तरह इस श्लोक में कृष्ण को इन्द्र गवाम् “गौवों का स्वामी” कहा गया है। वस्तुतः वे ही हर एक के असली इन्द्र, असली शासक हैं और सारे देवता उनकी परम इच्छा का प्रतिनिधित्व करने वाले उनके सेवक मात्र हैं।

इस अध्याय के उक्त तथा पिछले श्लोकों से आभास होता है कि कृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वत उठाये जाने का वृन्दावन के भोलेभाले ग्वालों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा और वे बारम्बार इस कौशल का स्मरण करने लगे। निश्चय ही जो भी व्यक्ति बाल कृष्ण के कार्यकलापों पर गम्भीरतापूर्वक तथा सोद्देश्य विचार करता है, वह उनकी शरण में जाकर उनका नित्य भक्त बन जाता है। इस अध्याय के पढ़ने के बाद यही निष्कर्ष निकालना चाहिए।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत “अद्भुत कृष्ण” नामक छब्बीसवें अध्याय के श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।